The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

53. भारतीय ज्ञान परंपरा पर भारतीय दर्शन का प्रभाव

मधु प्रजापति
रिसर्च स्कालर
बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी
ईमेल: madhuprajapati2014@gmail.com

शोध सार

परिचय - भारतीय ज्ञान प्रणाली विश्व की सबसे प्राचीनतम प्रणाली है। यह प्रणाली स्वयं में इतनी समृद्धियों को बटोरे हुए हैं कि इसका ज्ञान व्यक्ति को आत्मानुभूति की तरफ ले जाती है और उसके अंतर्निहित कौशल के विकास में सहयोगी होती है। भारतीय ज्ञान प्रणाली की सबसे खास बात यह है की यह मानवता को सर्वोपरि मानती है। इस प्रणाली में ज्ञान परंपरा और प्रथाओं का प्रोत्साहन देखने को मिलता है। वेद इस प्रणाली का अभिन्न अंग है और बिना वेदों के अध्ययन के भारतीय दर्शन के विषय में ज्ञान प्राप्त करना असंभव है।

मुख्य विषय – भारत का संपूर्ण दर्शन वेद और उपनिषद के विचारधाराओं से प्रभावित हुआ है। वेद को भारतीय दर्शन का आधार कहा जा सकता है। भारतीय दर्शन का आधार मुख्यतः वेद है ऐसा इसलिए कहा जाता है क्योंकि भारतीय दर्शन के दो संप्रदाय नास्तिक एवं आस्तिक संप्रदाय, वेदों मे विश्वास करने और उसमें विश्वास न करने के आधार पर ही बंटें हुए हैं। आस्तिक संप्रदाय अर्थात वेद के अनुयायी और नास्तिक अर्थात वेद के विरोधी। अतः यह कहना उचित होगा कि बिना वेद के ज्ञान के भारतीय दर्शन के ज्ञान का कोई औचित्य नहीं है। वैदिक काल, महाकाव्य काल और सूत्र काल इन्हीं तीनों के आधार पर भारतीय दर्शन की व्याख्या की गई है। वैदिक काल में वेदों और उपनिषदों के ज्ञान के पश्चात महाकाव्य काल में रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक एवं दार्शनिक ग्रंथों की रचना हुई। बौद्ध और जैन धर्म भी इसी काल की देन हैं। तत्पश्चात सूत्र काल में सूत्र साहित्य का निर्माण हुआ जिसमें षड् दर्शन उभर कर आए और इसी के कारण भारतीय दर्शन का महत्व बढ़ गया।

पद्धति – प्रस्तुत शोध आलेख की मुख्य पद्धति विश्लेषणात्मक है इस आलेख में मुख्यतः भारतीय दर्शन के सभी अंगों का विश्लेषण करने का प्रयत्न किया गया है।

मुख्य शब्द – ज्ञान, दर्शन, वेद, भारतीय आत्मा, प्रमाण, संप्रदाय

शोध आलेख

विश्व की प्राचीनतम ज्ञान प्रणाली भारतीय ज्ञान प्रणाली है। यदि भारतीय ज्ञान प्रणाली की बात की जाए तो यह स्वयं में इतना समृद्ध है की व्यक्ति के मन में उठ रहे लगभग सभी प्रश्नों के उत्तर देने में सक्षम है। भारतीय ग्रंथों में ज्ञान, उसके

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

स्वरूप और जीवन में उसके अनुप्रयोग पर विस्तृत चर्चा की गई है। भारतीय ज्ञान प्रणाली मनुष्य को ज्ञानी बनने के साथ-साथ जीवन जीने का तरीका भी सिखाती है। इस प्रणाली के समृद्धि की बात की जाए तो वर्तमान समय में हम शिक्षा के जो भी नए-नए खोज एवं आविष्कार कर रहे हैं हमारे प्राचीन ग्रंथों में उनका कहीं ना कहीं वर्णन अवश्य ही मिल जाएगा, चाहे वह चिकित्सा के क्षेत्र में, शिक्षा के क्षेत्र में, खगोल के क्षेत्र में, विज्ञान के क्षेत्र में, कृषि के क्षेत्र में या किसी भी नई तकनीकी क्षेत्र में क्यों ना हो। यह शिक्षा प्रणाली मनुष्य को आध्यात्मिक एवं भौतिक दोनों जीवन के लिए तैयार करती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा

भारतीय दर्शन का प्रारंभ सबसे प्राचीनतम एवं आरंभिक अंग वैदिक काल से होता है। भारतीय दर्शन की बात की जाए तो इस दर्शन में वेद और उपनिषद के विचारधाराओं का प्रभाव अत्यंत ही विशाल रूप में दिखाई देता है या यूं कहें की वेद और उपनिषद ही भारतीय दर्शन के आधार हैं। भारतीय दर्शन को समझने से पूर्व वेद के बारे में जानना अति आवश्यक है। मानव सभ्यता का सबसे पुराना लिखित दस्तावेज वेद को माना जाता है। वेद को 'श्रुति' भी कहा गया है। श्रुति का अर्थ है जिसका ज्ञान सुनकर हुआ हो अर्थात वेदों को ईश्वर की वाणी भी कहा जाता है। वेद का अर्थ ज्ञान होता है और दर्शन को वेद में अंतर्भूत ज्ञान का साक्षात्कार कहा जा सकता है। वेद को चार भागों में बांटा गया है– **(१) ऋग्वेद (२) यजुर्वेद (३) सामवेद (४) अथर्ववेद।** प्रत्येक वेद के तीन अंग हैं– (१) मंत्र (२) ब्राह्मण (३) उपनिषद।

इतिहासपुराणाभ्यां वेदों समुपबृंहयेत्।
विभेत्यल्पश्रुताद्र वेदो मामयं प्रहरिष्यति।। १below

ज्ञान प्राप्ति के लिए उपनिषद में एक पद्धति की चर्चा हुई है। जिसके तीन चरण हैं, *श्रवण*– इसका अर्थ है सुनना, अर्थात जो व्यक्ति मोक्ष की कामना रखता है उसे गुरु के आश्रम में जाकर उपनिषद के सिद्धांतों को सुनना चाहिए और यह कार्य श्रद्धा पूर्वक करना चाहिए। *मनन*– श्रवण के उपरांत मनन की अवस्था में जिन भी उपदेशों को हम सुनते हैं उन पर हमें विचार करना चाहिए और उनका चिंतन करना चाहिए। यह अवस्था तार्किक प्रक्रिया द्वारा पूरी होती है। तर्क के माध्यम से हमें सुने हुए उपदेशों पर विचार करना चाहिए। *निदिध्यासन*– अंतिम चरण निदिध्यासन का है, इसका अर्थ है कि श्रवण और मनन के पश्चात् हम जिस भी ज्ञान की प्राप्ति करते हैं उसका ध्यान आवश्यक है और इसे योगाभ्यास के द्वारा पुष्ट बनाया जाता है।

भारतीय दर्शन का विकास

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

भारतीय दर्शन एक साथ विकसित नहीं हुए हैं फिर भी उनमें एक अद्भुत सहयोग है सभी दर्शन साथ-साथ जीवित रहे हैं इसका कारण यह है कि भारत में दर्शन को जीवन का अभिन्न अंग माना गया है एक संप्रदाय का विकास होने के साथ ही उसे मानने वाले अन्य संप्रदायों का प्रादुर्भाव भी हो जाता है यही कारण है कि भारत के विभिन्न दर्शन शताब्दियों तक जीवित रहे हैं। भारतीय दर्शन को दो भागों में बांटा गया है–

- ***आस्तिक संप्रदाय*** अर्थात वेद की प्रमाणिकता में विश्वास करने वाले, स्वतंत्र आधार वाले, कर्मकांड और ज्ञान कांड पर आधारित संप्रदाय। वेद के अनुयायी छ दर्शन हैं इन्हें षड् दर्शन भी कहा जाता है। ये हैं (१) न्याय (२) वैशेषिक (३) सांख्य (४) योग (५) मीमांसा (६) वेदान्त।
- ***नास्तिक संप्रदाय*** अर्थात वेद की प्रमाणिकता को स्वीकार नहीं करने वाले संप्रदाय। इस संप्रदाय के अंदर चार्वाक, जैन और बौद्ध को रखा जाता है।

किसी भी दर्शन को पूर्ण रूप से समझने के लिए उसके विभिन्न अंगों को समझना आवश्यक है उस दर्शन की पूर्ण व्याख्या उसके अंगों में निहित होती है। किसी भी दर्शन को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया जाता है।

- **प्रमाण विज्ञान**
- **तत्व विज्ञान**
- **नीति विज्ञान**

(१) **चार्वाक दर्शन**

चार्वाक दर्शन की ज्ञान मीमांसा भौतिकवादी है। इसे जड़वादी दर्शन की भी संज्ञा दी जाती है। चार्वाक एकमात्र ऐसा दर्शन है जो केवल प्रत्यक्ष को ज्ञान का साधन मानता है। इस दर्शन को नास्तिक और ईश्वर वादी, प्रत्यक्ष वादी एवं सुखवादी दर्शन भी कहा जाता है। यह दर्शन वेदों का खंडन करते हैं। चार्वाक दर्शन में सही ज्ञान को प्रमाण तथा ज्ञान के विषय को प्रमेय कहा गया है। इस दर्शन की युक्ति है ***प्रत्यक्षमेव प्रमाणम्*** । प्रत्यक्ष के लिए इंद्रिय, विषय तथा सन्निकर्ष यह तीनों चीज आवश्यक होती हैं।

चार्वाक दर्शन अनुमान प्रमाण का प्रबल रूप से खंडन करते हैं यह प्रत्यक्ष को छोड़कर अन्य सभी प्रमाणों के विरोधी हैं। इस दर्शन के अनुसार जड़ जगत का निर्माण चार भूतों से हुआ है– ***पृथ्वी, जल, अग्नि*** एवं ***वायु*** । चार्वाक आकाश नामक भूत की सत्ता को स्वीकार नहीं करते हैं। इन चार भूतों का स्वभाव ऐसा है कि इन्हीं से जगत की सृष्टि हो जाती है। इसके लिए अन्य किसी कारण को स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं होती है। सजीव एवं निर्जीव सभी वस्तुओं की उत्पत्ति इन्हीं चार भूतों से होती है। चार्वाक के अनुसार यह विश्व प्रयोजनहीन है वह विश्व को यंत्र की तरह उद्देश्य हैं मानते हैं इस प्रकार इस दर्शन को प्रयोजनवादी नहीं अपितु यंत्रवादी दर्शन भी कहा जा सकता है।

The Asian Thinker

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

चार्वाक दर्शन आत्मा की सत्ता में विश्वास नहीं करता है। वह चैतन्य की सत्ता को स्वीकार करता है। चार्वाक के अनुसार प्रत्यक्ष दो प्रकार के होते हैं– बाह्य प्रत्यक्ष और आंतरिक प्रत्यक्ष और इसीलिए यह चेतन को शरीर का गुण मानते हैं। उनके अनुसार शरीर है तो चेतन है और शरीर नहीं है तो चेतन नहीं है अतः चेतन शरीर को ही आत्मा कहा जाता है शरीर एवं आत्मा दोनों अभिन्न है। चार्वाक दर्शन अर्थ एवं कम इन्हीं दो पुरुषार्थों में विश्वास रखता है। उनके अनुसार काम पुरुषार्थ और मृत्यु ही अपवर्ग है अर्थात मृत्यु का अर्थ मोक्ष की प्राप्ति है।

(२) **बौद्ध दर्शन**

नास्तिक दर्शन में पहला दर्शन बौद्ध दर्शन है। इस दर्शन के संस्थापक महात्मा बुद्ध माने जाते हैं। बौद्ध दर्शन का मुख्य उद्देश्य वेदों के कर्मकांड को रोकना था। महात्मा बुद्ध ने कोई पुस्तक नहीं लिखी। उनके उपदेशों का संग्रह त्रिपिटक में हुआ जो कि उनके शिष्यों द्वारा किया गया। त्रिपिटक को ही बौद्ध धर्म का प्रमाणिक आधार कहा जाता है। त्रिपिटक अर्थात सुत्तपिटक, अभिधम्म पिटक और विनय पिटक।

महात्मा बुद्ध ईश्वर आत्मा जगत से संबंधित प्रश्नों पर मौन रहते थे। उनके इस मौन का मुख्य कारण था उनका दार्शनिक कम एवं समाज सुधारक अधिक होना। उनके अनुसार संसार दुखों से परिपूर्ण है । उनका अंतिम उद्देश्य दुख का अंत कहा जा सकता है क्योंकि बुद्ध ने दुख की समस्या और दुख निरोध पर ही अधिक जोर दिया है। इसी पर आधारित बुद्ध के उपदेश चार आर्य संतोष में सन्निहित हैं। यह चार आर्य सत्य इस प्रकार हैं –

- संसार दुखों से परिपूर्ण है
- दुख का कारण भी है
- दुख का निवारण है
- दुख निवारण के मार्ग हैं

इन्हीं चार आर्य सत्यों से अनासक्ति, वासनाओं का नाश, दुखों का अंत, मानसिक शांति, ज्ञान, प्रज्ञा तथा निर्वाण संभव हो सकते हैं। द्वितीय आर्य सत्य को प्रतीत्यसमुत्पाद और भाव चक्र भी कहा जाता है। प्रतीत्यसमुत्पाद की 12 कड़ियां है। इन्हें द्वादश निदान भी कहा जाता है– (१) जरामरण, (२) जाति, (३) भव, (४) उपादान, (५) तृष्णा, (६) वेदना, (७) स्पर्श, (८) षडायतन, (९) नामरूप, (१०) विज्ञान, (११) संस्कार, (१२) अविद्या । अविद्या ही दुखों का मूल कारण है। प्रतीत्यसमुत्पाद इस दर्शन का केंद्र बिंदु है। इसी से अनात्मवाद, क्षणिकवाद और कर्मवाद के सिद्धांतों की पुष्टि होती है। चतुर्थ आर्य सत्य में निर्वाण प्राप्ति के आठ मार्ग बताए गए हैं। जिन्हें अष्टांगिक मार्ग कहा जाता है। ***(१) सम्यक् दृष्टि, (२) सम्यक् संकल्प, (३) सम्यक् वाक्, (४)सम्यक् कर्मांत्, (५) सम्यक् आजीव, (६) सम्यक् व्यायाम, (७) सम्यक्***

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

स्मृति, (८) सम्यक् समाधि। बौद्ध दर्शन में निर्वाण को परम लक्ष्य स्वीकार किया गया है। इस जीवन में मुक्त व्यक्ति को अर्हत् की संज्ञा दी गई है। परिनिर्वाण बौद्धों के अनुसार देहपात के बाद प्राप्त होता है। इसे विदेह मुक्ति कहा जाता है। बौद्ध दर्शन के द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि संसार की प्रत्येक वस्तु क्षणिक है, परिवर्तनशील है, एवं अनित्य है। बौद्ध दर्शन किसी भी शाश्वत आत्मा की सत्ता का स्वीकार नहीं करता है। बौद्ध अनात्मवाद का प्रतिपादन करते है। बुद्ध के अनुयायी पुनर्जन्म की समस्या के समाधान हेतु कहते हैं कि वर्तमान जीवन की अवस्था से भविष्य जीवन की प्रथम अवस्था का विकास संभव है। बुद्ध के उपदेशों एवं शिक्षाओं को लेकर उनके मतानुयायियों में विभेद हो गया, जिसके कारण बौद्ध अनेक संप्रदाय में बंट गया। सर्वप्रथम दो संप्रदाय– हीनयान एवं महायान अस्तित्व में आते हैं। उसके उपरांत महायान के दो संप्रदाय शून्यवाद एवं विज्ञानवाद। हीनयान के दो संप्रदाय वैभाषिक एवं सौत्रान्तिक हुए। हीनयान एवं महायान बौद्ध धर्म के धार्मिक संप्रदाय हैं।

(३) **जैन दर्शन**

जैन दर्शन में २४ तीर्थंकरों की एक लंबी परंपरा है। जिसमें प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव हुए। 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ और 24 में महावीर स्वामी है। इस दर्शन का मुख्यतः प्रचार प्रसार महावीर स्वामी के द्वारा माना जाता है। तीर्थंकर उन व्यक्तियों को कहा जाता है जो मुक्त हैं अर्थात जिन्होंने अपने प्रयत्नों के बल पर सभी बंधन को त्याग कर मोक्ष को अंगीकार किया है। वह जैन दर्शन में तीर्थंकर कहलाए।

जैन दर्शन में ज्ञान के दो भेद किए गए हैं– (१) परोक्ष ज्ञान, (२) अपरोक्ष ज्ञान। पुनः परोक्ष ज्ञान के दो प्रकार (१) मति और (२) श्रुति तथा अपरोक्ष ज्ञान के तीन प्रकार (१) अवधि, (२) मनः पर्याय तथा (३) केवल ज्ञान हैं। यह दर्शन तीन प्रमाणों को स्वीकार करता है– प्रत्यक्ष अनुमान व शब्द। शब्द के दो भेद हैं– लौकिक व शास्त्रज। प्रत्यक्ष के भी दो भेद माने गए हैं– पारमार्थिक प्रत्यक्ष व व्यावहारिक प्रत्यक्ष। और ठीक इसी प्रकार अनुमान के भी दो भेद स्वीकार किए जाते हैं स्वार्थानुमान व परार्थानुमान। जैनों के अनुसार प्रत्येक वस्तु के अनंत धर्म है जिसकी पूरी जानकारी देना असंभव है और इसके लिए उन्होंने स्यादवाद का सिद्धांत दिया है। स्यादवाद को हम सप्त भंगी नए भी कह सकते हैं। यह सात प्रकार के होते हैं– ***स्यात्-अस्ति, स्यात्-नास्ति,स्यात् अस्ति च नास्ति च,स्यात् अवक्तव्यम्,स्यात् अस्ति च अवक्तव्यम् च,स्यात् नास्ति च अवक्तव्यम् च,स्यात् अस्ति च नास्ति च अवक्तव्यम् च।***[२] जैन आचार्य के अनुसार गुण एवं पर्यायों के समूह को द्रव्य कहते हैं। द्रव्य का विभाजन दो रूपों में किया गया है आस्तिकाय एवं अनास्तिकाय। आस्तिकाय द्रव्य दो प्रकार के होते हैं– जीव एवं अजीव। अजीव तत्वों को चार भागों में बांटा गया है– धर्म, अधर्म, पुद्गल एवं आकाश। जैन दर्शन चेतन को मनुष्य का अनिवार्य गुण मानता है। उनके अनुसार चेतन द्रव्य को जीव कहा जाता है। जीव कर्ता, भोक्ता तथा जाता है। जीव अनंत है। इनमें चार प्रकार की पूर्णताएं पाई जाती हैं– अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

वीर्य एवं अनंत आनंद। इन्हें 'अनंत चतुष्टय' कहा जाता है। जीव के दो भेद किए जाते हैं– बद्ध एवं मुक्त। बद्ध जीव भी दो प्रकार के होते हैं– स्थावर एवं त्रस। स्थावर जीव गतिहीन होते हैं। त्रस जीव वे हैं जो निरंतर विश्व में भटकते रहते हैं। द्रव्य का लक्षण है– **उत्पत्तिव्ययध्रौव्यलक्षणंसत्**। जीव के समस्त कर्मों का आत्यंतिक वियोग 'मोक्ष' है। इसका मुख्य कारण अविद्या होती है। जैन दर्शन में जीवन मुक्ति को ही स्वीकार किया गया है। जैन दर्शन 'त्रिरत्न' को मोक्ष का मार्ग बताते हैं – (१) सम्यक् दर्शन, (२) सम्यक् ज्ञान, (३)सम्यक् चरित्र।

सम्यक्–दर्शन– ज्ञान– चरित्राणि मोक्ष– मार्गः। ३

(४) **न्याय दर्शन**

न्याय दर्शन के प्रवर्तक महर्षि गौतम है। न्याय दर्शन के ज्ञान का आधार 'न्याय सूत्र' है जिसके रचयिता गौतम मुनि को कहा जाता है। यह न्याय दर्शन का प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है। गंगेश उपाध्याय की तत्व चिंतामणि नामक ग्रंथ से नव्य न्याय का प्रारंभ होता है।

न्याय दर्शन में 16 पदार्थ की व्याख्या हुई है। जो कि इस प्रकार हैं– (१) प्रमाण, (२) प्रमेय, (३)संशय, (४)प्रयोजन, (५) दृष्टांत, (६) सिद्धांत, (७) अवयव, (८) तर्क, (९) निर्णय, (१०) वाद, (११) जल्प, (१२) वितण्डा, (१३) हेत्वाभास, (१४) छल, (१५) जाति, (१६) निग्रह स्थान। न्याय दर्शन में ज्ञान बुद्धि और उपलब्धि के अर्थ में प्रयुक्त किए गए हैं। व्यापक अर्थ में ज्ञान को यथार्थ और यथार्थ ज्ञान के रूप में समझा जा सकता है। यथार्थ ज्ञान को 'प्रमा' और अयथार्थ ज्ञान को 'अप्रमा' की संज्ञा से अभिहित किया गया है। प्रमा के चार भेद प्रत्यक्ष, अनुमिति, शब्द तथा उपमिति हैं। अप्रमा के भी चार भेद स्मृति, संशय, विपर्यय, तथा तर्क हैं। न्याय दर्शन में प्रत्यक्ष ज्ञान, ज्ञान के साधन के अतिरिक्त साध्य के रूप में भी होता है। यह ज्ञान स्वतंत्र और निरपेक्ष प्रमाण है। इसीलिए कहा गया है **प्रत्यक्षे किं प्रमाणम्।"** इसके दो भेद हैं लौकिक तथा अलौकिक। प्रत्यक्ष ज्ञान का मतलब है वह ज्ञान जो ज्ञानेंद्रियों के माध्यम से सामने रहकर प्राप्त होता है, प्रत्यक्ष ज्ञान कहलाता है। ४

अनुमान न्याय दर्शन का दूसरा प्रमाण है। अनुमान को "तत्त्वपूर्वकम् प्रत्यक्ष मूलक" कहा जाता है। न्याय दर्शन दो प्रकार के अनुमान की व्याख्या करता है– (१) स्वार्थानुमान, (२) परार्थानुमान। परार्थानुमान के पांच अवयव होते हैं– प्रतिज्ञा, हेतु, दृष्टांत, उपनय, निगमन। अनुमान का उद्देश्य पक्ष और साध्य के बीच संबंध स्थापित करना है। अतः यहां पक्ष, साध्य और हेतु इन तीनों को समझना अनिवार्य है। हेतु और साध्य के व्यापक संबंध को व्याप्ति कहते हैं। अनुमान के दोष को न्याय दर्शन में हेत्वाभास कहा गया है। यह पांच प्रकार के होते हैं– (१) सव्यभिचार, (२) विरुद्ध (३) सत्प्रतिपक्ष, (४) असिद्ध, (५) बाधित।

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

नैयायिक शब्द प्रमाण में भी विश्वास रखते हैं। न्याय सूत्र में शब्द की यह परिभाषा है **'आप्तोपदेश: शब्द:'** । शब्द को दो हिस्सों में बांटा गया है – दृष्टार्थ और अदृष्टार्थ। ऐसे शब्द का ज्ञान जो संसार की प्रत्यक्ष की जा सकने वाली वस्तुओं से संबंधित हो वह दृष्टार्थ शब्द होते हैं। अदृष्टार्थ शब्द, जिनका प्रत्यक्ष नहीं किया जा सकता हो जैसे धर्म–अधर्म, पाप–पुण्य, नीति– दुराचार, इत्यादि।

न्याय दर्शन में उपमान को एक प्रमाण माना गया है। यह ज्ञान सादृश्य के आधार पर प्राप्त होता है। इसलिए इसे सादृश्यानुमान कहा जाता है। उदाहरण के लिए किसी आदमी को यह ज्ञात नहीं है कि नीलगाय किस प्रकार की होती है परंतु कोई विश्वासी व्यक्ति उसे यह कहता है कि नील गाय के सदृश्य ही होती है अब वह व्यक्ति जंगल में एक पशु को देखता है जो गाय के सदृश्य दिखती है तो वह तुरंत समझ जाता है कि यह नीलगाय है इस प्रकार उपमान के द्वारा उसे ज्ञान होता है।

न्याय दर्शन के अनुसार कार्य नियम स्वयं सिद्ध हैं अतः न्याय का कार्य कारण सिद्धांत असद्कार्यवाद कहलाता है। न्याय ईश्वर वादी दर्शन है उनके अनुसार ईश्वर एक आत्मा है जो चैतन्य से युक्त है। इस ईश्वर के अस्तित्व के प्रमाण भी इस दर्शन में मिलते हैं जैसे कारणाश्रित तर्क, नैतिक तर्क, वेदों के प्रमाणित पर आधारित तर्क, श्रुतियों के आप्तता पर आधारित तर्क। आत्मा संबंधी विचार के संदर्भ में इस दर्शन का मानना है कि चैतन्य आत्मा का आगंतुक गुण है। आत्मा एक ज्ञाता, कर्ता और नित्य तथा नीरवयव है। इस दर्शन में आत्मा को विभु माना जाता है।

(५) वैशेषिक दर्शन

वैशेषिक दर्शन के प्रणेता महर्षि कणाद को माना जाता है। प्रशस्तपाद नें वैशेषिक सूत्र पर एक भाष्य लिखा है जिसे पदार्थ धर्म संग्रह कहा जाता है। न्याय और वैशेषिक दर्शन को समान तंत्र कहकर उनके संबंध को स्पष्ट किया जाता है। वैशेषिक दर्शन को वैशेषिक कहने का कारण है क्योंकि यह विशेष नामक पदार्थ की व्याख्या करता है।

इस दर्शन में पदार्थ का विभाजन दो वर्गों में हुआ है भाव पदार्थ, अभाव पदार्थ। भाव पदार्थ छ हैं द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय। अभाव पदार्थ की व्याख्या वैशेषिक सूत्र में नहीं की गई है।

अन्य भारतीय दर्शनों की तरह न्याय वैशेषिक दर्शन भी विश्व की उत्पत्ति के संबंध में सृष्टिवाद के सिद्धांत को अपनाता है। वैशेषिक के अनुसार विश्व का निर्माण परमाणुओं से हुआ है, जो की चार प्रकार के होते हैं पृथ्वी के परमाणु, जल के परमाणु, वायु के परमाणु, और अग्नि के परमाणु। यह नीरवयव होते हैं अर्थात निर्माण और विनाश से परे होते हैं। परमाणुओं के संयुक्त होने से वस्तु का निर्माण होता है और इनका विच्छेद होने से वस्तुओं का नाश होता है। परमाणुओं में गति का संचालन ईश्वर के द्वारा होता है।

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

(६) **सांख्य दर्शन**

सांख्य दर्शन के प्रणेता महर्षि कपिल माने जाते हैं महर्षि कपिल ने *सांख्य प्रवचन सूत्र* एवं *तत्व समास* नामक दो रचनाएं की। वाचस्पति मिश्र की *सांख्यकारिका* पर लिखी गई टीका *सांख्य तत्व कौमुदी* इस दर्शन के साहित्य हैं। सांख्य दर्शन द्वैतवादी है। इस दर्शन में पुरुष एवं प्रकृति दो तत्वों को अंगीकार किया गया है। इस दर्शन के अनुसार विश्व का मूल कारण ना तो परमाणु है और नहीं चेतन अपितु विश्व का कारण प्रकृति है। यह एक तथा सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों है। प्रकृति को माया, जड़, प्रधान, अव्यक्त, शक्ति, अदृश्य, शाश्वत और चेतन इत्यादि कहा गया है। प्रकृति में तीन प्रकार के गुण पाए जाते हैं– सत्व, रज एवं तमस। सांख्यकारिका में प्रकृति के अस्तित्व की सिद्धि के लिए निम्नलिखित तर्क दिए गए हैं।

भेदानां परिमाणात् समन्वयात् शक्तित: प्रवृतेश्च ।
कारणकार्यविभागादविभागत् वैश्वरूपस्य ।।

सांख्य के गुणों की विशेषता यह है कि वह निरंतर परिवर्तित होते रहते हैं और इस प्रकार दो तरह के परिवर्तन स्वीकृत किए गए हैं– सरूप परिवर्तन और विरूप परिवर्तन। जब एक गुण अपने वर्ग के गुण में आकर चिपक जाता है तब सरूप परिवर्तन होता है और यह परिवर्तन केवल विनाश या प्रलय काल में होता है। और जब एक वर्ग का गुण दूसरे वर्ग के गुण में परिवर्तित होता है तब उसे विरूप परिवर्तन कहते हैं। यह सृष्टि के विकास के लिए आरंभ होता है।

सांख्य दर्शन में पुरुष की सत्ता स्वयं सिद्ध मानी गई है। यह शुद्ध, चैतन्य, द्रष्टा, ज्ञाता है किंतु पुरुष ज्ञान का विषय नहीं हो सकता है। और यह कार्य कारण श्रृंखला से परे हैं। इस दर्शन में आत्मा को आनंदमय नहीं माना गया है आत्मा अर्थात पुरुष। पुरुष की संख्या अनेक है। यह दर्शन अनेकात्मवादी है। सांख्य दर्शन पुरुष की सत्ता के लिए निम्नलिखित तर्क देता है।

संघात परार्थत्वात् त्रिगुणादि विपर्ययादधिष्ठानात्।
पुरुषोऽस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थ प्रवृत्तेश्च।।

सांख्य दर्शन विकासवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन करता है। पुरुष एवं प्रकृति के संयोग से विकास प्रारंभ होता है सर्वप्रथम दोनों के सहयोग से 'महत्' अर्थात बुद्धि की उपलब्धि होती है। बुद्धि के दो मुख्य कार्य हैं निश्चय एवं अवधारण। बुद्धि त्रिगुणात्मक होती है अर्थात इसमें भी सत्व तमस और राजस् होते हैं। बुद्धि से अहंकार की उत्पत्ति होती है और अहंकार भी इन्हीं तीन गुणों से मिलकर बनता है। सात्विक अहंकार से मन, पांच कर्मेंद्रियां और पांच ज्ञानेंद्रियां उत्पन्न होती हैं। तामस अहंकार से पंच तन्मात्रा एवं पुनः पंच तन्मात्राओं से पंच महाभूतों की उत्पत्ति होती है। सांख्य दर्शन विकासवादी दर्शन है। इसका विकासवाद, अचेतन प्रयोजनवाद का सर्वोत्तम उदाहरण है। सांख्य दर्शन तीन प्रकार के दुख का वर्णन करता है– आध्यात्मिक दुख, आधिभौतिक दुख एवं आधिदैविक दुख। इस दर्शन का मोक्ष के संदर्भ में यह मानना है कि

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

व्यक्ति जब इन तीनों दुखों से मुक्त हो जाता है और आत्म एवं अनात्म के भेद का ज्ञान नहीं रहता है तब वह मोक्ष की अवस्था में होता है। यह अवस्था त्रिगुणातीत है एवं इसे आनंदमय मानना गलत है। सांख्य दर्शन जीवन मुक्ति एवं विदेश मुक्ति दोनों में विश्वास रखता है। और यह योग की तरह ही अष्टांग योग पर अपनी श्रद्धा दिखाते हुए इसे मोक्ष का साधन स्वीकार करता है।

(७) **योग दर्शन**

योग दर्शन के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि हैं। सांख्य दर्शन की तरह योग दर्शन भी द्वैतवादी है किंतु यह दर्शन ईश्वर की सत्ता को भी स्वीकार करता है। योग दर्शन एक व्यवहारिक दर्शन है और यह योगाभ्यास पर अधिक बल देता है। योग का अर्थ है – चित्र वृत्ति का निरोध– **योगश्चित्तवृत्ति निरोध:**। ५

योग दर्शन मानसिक अवस्था के भिन्न-भिन्न रूपों को स्वीकार करता है। इसे ही चित्तभूमि कहा गया है। यह पांच प्रकार की होती हैं– क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र, निरोध। इस दर्शन का तत्त्वशास्त्र सांख्य दर्शन की ही भांति है। इस दर्शन में भी बंधन का मूल कारण अविवेक को माना गया है और चित्र वृत्तियों के निरोध से ही मनुष्य बंधन से मुक्त होता है अर्थात मोक्ष की प्राप्ति करता है। मोक्ष प्राप्ति के लिए बताया गया मार्ग योग दर्शन में 'अष्टांग मार्ग' कहलाता है। अष्टांग मार्ग अर्थात् (१) ***यम, (२) नियम, (३) आसन, (४) प्राणायाम, (५) प्रत्याहार, (६) धारणा, (७) ध्यान, (८) समाधि।***

प्रथम पांच योगांग को बहीरंग साधन तथा शेष तीन को अंतरंग साधन कहा गया है। योग दर्शन दो प्रकार की समाधियों की व्याख्या करता है– संप्रज्ञात समाधि तथा असंप्रज्ञात समाधि। जब ध्येय विषय का स्पष्ट ज्ञान होता है तो वह संप्रज्ञात समाधि की अवस्था में होता है और जब ज्ञान का विषय लुप्त हो जाता और आत्मा अपने यथार्थ स्वरूप को पहचान लेती है तो वह असंप्रज्ञात समाधि की अवस्था होती है। असंप्रज्ञात समाधि चार प्रकार की होती है– सवितर्क, सविचार, सानंद एवं सास्मित। सांख्य दर्शन ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करता है। और इस दर्शन में ईश्वर भक्ति पर बोल दिया गया है अर्थात ईश्वर प्राणिधान की बात की जाती है जो की चित्तवृत्तियों के निरोध में सहायक होता है। योग दर्शन ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए तर्क भी देता है।

(८) **मीमांसा दर्शन**

इस दर्शन के प्रणेता महर्षि जैमिनी माने जाते हैं। मीमांसा दर्शन वेद की प्रमाणिकता में विश्वास करता है और यह दर्शन पूर्णतः वेदों पर आधारित है। यह दर्शन वेद के कर्मकांड की चर्चा करता है। इस दर्शन के दो संप्रदाय हैं– कुमारिल भट्ट व प्रभाकर संप्रदाय। मीमांसा दर्शन में 6 प्रमाण को स्वीकार किया गया है– प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान, अर्थापत्ति एवं अनुपलब्धि। प्रभाकर अनुपलब्धि को स्वतंत्र प्रमाण नहीं मानते हैं वे केवल पांच प्रमाणों में ही विश्वास रखते हैं। वहीं दूसरी ओर कुमारिल 6 प्रमाण को स्वीकार करते हैं। प्रत्यक्ष के विषय में बात की जाए तो प्रभाकर के मतानुसार प्रत्यक्ष

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

ज्ञान ***साक्षात प्रतीतिः प्रत्यक्षम्*** है अर्थात विषय की साक्षात प्रतीति होती है। इस प्रकार प्रभाकर 'त्रिपुटी प्रत्यक्ष' के समर्थक हैं। कुमारिल एवं प्रभाकर दोनों ही प्रत्यक्ष ज्ञान की दो अवस्थाओं को स्वीकार करते हैं प्रथम अवस्था 'सविकल्पक' एवं दूसरी 'निर्विकल्पक' प्रत्यक्ष कहलाती है। मीमांसा का दूसरा प्रमाण अनुमान है। अनुमान विषयक विचार न्याय से मिलता जुलता है। जहां न्याय एक अनुमान के लिए पांच वाक्य को आवश्यक मानते हैं वही मीमांसा के अनुसार प्रथम तीन व अंतिम तीन को ही अनुमान के लिए मनाना पर्याप्त होगा।

इसके उपरांत उपमान प्रमाण की बात की जाए तो मीमांसा दर्शन इसे एक स्वतंत्र प्रमाण के रूप में स्वीकार करता है उपमान जन्य ज्ञान तब होता है जब हम पहले देखी हुई वस्तु के समान किसी वस्तु को देखकर यह समझते हैं की स्मृतिवस्तु प्रत्यक्षवस्तु के समान हैं। इस ज्ञान को प्रत्यक्ष नहीं कहा जा सकता है क्योंकि प्रत्यक्ष वस्तु, स्मृति वस्तु के समान होती है अर्थात स्मृति वस्तु का उस समय प्रत्यक्ष नहीं हो रहा है। इसे अनुमान भी नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यहां पर व्याप्ति वाक्य का अभाव है और यह शब्द प्रमाण भी नहीं होता है। मीमांसको के अनुसार ज्ञात वस्तु के सदृश्य ज्ञान के आधार पर अज्ञात वस्तु का ज्ञान होना उपमान कहलाता है। इसे हम पाश्चात्य तर्कशास्त्र में सादृश्यानुमान के आधार पर समझ सकते हैं।

शब्द प्रमाण की बात की जाए तो शब्द के दो भेद माने गए हैं– (१) पौरुषेय, (२) अपौरुषेय । वेद वाक्य को अपौरुषेय माना जाता है तथा वे स्वतः प्रमाणित होते हैं। विश्वस्त व्यक्ति के कथित या लिखित वचन को पौरुषेय कहा जाता है। वेद वाक्य के दो प्रकार बताए गए हैं– (१) सिद्धार्थ वाक्य, (२) विधायक वाक्य। मीमांसा दर्शन शब्द को नित्य मानता है अर्थात इसकी ना उत्पत्ति है और ना ही विनाश।

अर्थापत्ति प्रमाण का प्रयोग दैनिक जीवन में सभी करते हैं। इसके द्वारा अनेक विषयों का ज्ञान हो जाता है कुछ ऐसी घटनाएं घटती हैं जिनके व्याख्या के लिए अर्थापत्ति को मानना आवश्यक होता है– जैसे यदि हम किसी से मिलने उसके घर जाते हैं और वह वहां अनुपस्थित होता है तो अर्थापत्ति के द्वारा हम यह कल्पना कर लेते हैं कि वह अन्यत्र कहीं पर होगा। इस प्रकार अर्थापत्ति के दो प्रकार होते हैं– (१) दृष्टार्थापत्ति (२) श्रुतार्थापत्ती। दृष्टार्थापत्ति अर्थात प्रत्यक्ष द्वारा विषय की कल्पना करना और श्रुतार्थापत्ति अर्थात शब्द ज्ञान द्वारा या सुनकर विषय की कल्पना करना।

अब अगला प्रमाण अनुपलब्धि प्रमाण है। यह प्रमाण किसी विषय के अभाव का साक्षात ज्ञान कराती है। यदि किसी कमरे में घड़े का अभाव है तो इसका ज्ञान हमें अनुपलब्धि के द्वारा होता है। अन्य दर्शनों में अनुपलब्धि को प्रत्यक्ष प्रमाण के द्वारा ही सिद्ध किया जाता है क्योंकि प्रत्यक्ष से हमें भाव और अभाव दोनों का बोध हो जाता है।

(९) **वेदांत दर्शन**

वेदांत दर्शन को उपनिषद पर आधारित दर्शन कहा जा सकता है। इस दर्शन का आधार बादरायण का *ब्रह्म सूत्र* है जो की उपनिषदों के विचारों में सामंजस्य लाने के उद्देश्य से लिखा गया था।

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

शंकर, रामानुज, माधवाचार्य, वल्लभाचार्य, निंबार्क इत्यादि वेदांत दर्शन के विभिन्न संप्रदाय के प्रवर्तक बन गए। इनमें से मुख्य चार संप्रदाय हैं– अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, ।

इनमें सबसे प्रधान शंकर का अद्वैत दर्शन माना जाता है। इस दर्शन का प्रमुख विषय जीव एवं ब्रह्म का संबंध स्थापित करना है। शंकर के अनुसार ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है। ***ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवोब्रह्मैवनापरः।*** ६

६ब्रह्म विश्व का अधिष्ठान एवं आधार है। शंकराचार्य विश्व को भली-भांति समझने के लिए तीन सत्ताओं का उल्लेख करते हैं– प्रातिभासिक सत्ता, व्यावहारिक सत्ता एवं पारमार्थिक सत्ता। उनके अनुसार सत् वह जो है जो त्रिकाल बाधित हो – ***त्रिकालाबाधित्वं सत्*** । जगत व्यावहारिक दृष्टि से पूर्णतः सत् है किंतु परमार्थिक दृष्टि से पूर्णतः असत्। इसलिए इसे ना सत् कह सकते हैं ना असत् कह सकते हैं। अतः शंकराचार्य इसे अनिर्वचनीय कहते हैं। शंकर के दर्शन में माया और अविद्या का प्रयोग एक ही अर्थ में हुआ है। माया, अविद्या, अध्यास, अध्यारोप, भ्रांति, विवर्त, भ्रम, नामरूप, अव्यक्त, मूल प्रकृति आदि शब्दों का प्रायः एक ही अर्थ में प्रयोग किया गया है। शंकराचार्य के अनुसार माया ब्रह्म में रहती है। माया का आश्रय ब्रह्म है किंतु माया ब्रह्म को प्रभावित नहीं कर सकती है। माया के विषय में बात किया जाए तो यह अनादि है। इसकी शक्ति से विश्व का नाना रुपात्मक जगत उपस्थित होता है। माया ब्रह्म को सक्रिय करती है और माया सहित ब्रह्म ईश्वर कहलाता है। माया त्रिगुणात्मिका, जड़ और मोक्ष की प्राप्ति में बाधक होती है। माया के मुख्यतः दो कार्य हैं वस्तुओं के वास्तविक स्वरूप को ढक लेना जिसे आवरण कहा जाता है और दूसरा कार्य है सत्य के स्थान पर दूसरी वस्तु को उपस्थित कर देना जिसे विक्षेप कहा जाता है। माया अनिर्वचनीय एवं पूर्णतः ईश्वर से अभिन्न है। शंकराचार्य के अनुसार जो पूर्ण सत्य है वह ब्रह्म है, वह स्वयं प्रकाश है, और ब्रह्म का ज्ञान उसके स्वरूप का अंग है। यह दिक् काल की सीमा से परे है और इस पर कार्य कारण भी लागू नहीं होता है। ब्रह्म निर्गुण है। और यह सजातीय, विजातीय एवं स्वगत भेद से भी परे है। शंकर के अनुसार ब्रह्म और आत्मा एक ही है। उपनिषदों के नीति विचार के आधार पर शंकर भी ब्रह्म की व्याख्या करते हैं। ब्रह्म वस्तुतः निर्गुण एवं निराकार है। माया सहित ब्रह्म ईश्वर कहलाता है और ईश्वर को जगत का श्रष्टा कहा जाता है। ईश्वर ही जगत का उपादान एवं निमित्त दोनों कारण हैं। ईश्वर विश्व में व्याप्त रहता है। ईश्वर व्यावहारिक दृष्टि से सत्य होता है और वह सगुण, सविशेष एवं साकार है वहीं दूसरी ओर ब्रह्म परमार्थिक रूप से सत्य है और वह निर्गुण, निर्विशेष एवं निराकार है।

शंकराचार्य के अनुसार आत्मा का शरीर के साथ आसक्त होना ही बंधन है। इसका मूल कारण अज्ञान है। शंकर के अनुसार मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान अत्यंत आवश्यक हैं ज्ञान प्राप्ति के लिए 'साधन चतुष्टय' आवश्यक है।

नित्यानित्य वस्तु विवेक – साधक में नित्य एवं अनित्य वस्तुओं में भेद करने का विवेक होना चाहिए।

इहामूत्रार्थ भोग विराग – साधक को लौकिक एवं पारलौकिक भोगों की कामना का परित्याग करना चाहिए।

The Asian Thinker
A Quarterly Bilingual Peer-Reviewed Journal for Social Sciences and Humanities
Year-7 Volume: IV (Special), October-December, 2025
Issue-28 ISSN: 2582-1296 (Online)
Website: www.theasianthinker.com **Email**: asianthinkerjournal@gmail.com

शमदमादि साधन सम्पत् – साधक को शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपरति एवं तितिक्षा इन छः साधनों को अपनाना चाहिए।

मुमुक्षुत्व – साधक में मोक्ष प्राप्त करने की उत्कट इच्छा होनी चाहिए।

'साधन चतुष्टय' का पालन करते हुए जीवन यापन करना नैतिक जीवन है। मोक्षावस्था में जीव ब्रह्म में विलीन हो जाता है। वह ब्रह्म के सदृश नहीं होता, वरन स्वयं ब्रह्मा हो जाता है।

उपसंहार - इस प्रकार भारतीय दर्शन भारतीय ज्ञान परंपरा में अपना विशेष स्थान रखती है और इसके अध्ययन के बिना भारतीय ज्ञान परंपरा को समझना असंभव सा प्रतीत होता है।

संदर्भ सूची

१. श्रीमहाभारते आदिपर्वणि १.२६७,२६७.१/२
२. रा. वा., ४/४२/१५
३. तत्त्वार्थधिगम् सूत्र। २–३
४. तर्क संग्रह, पृ• २०
५. पातंजल योग सूत्र, श्लोक ०२
६. ब्रह्मज्ञानवाली माला, श्लोक ३४८

The Asian Thinker